भक्ति योग

प्रो. (डॉ.) सोहन राज तातेड़,

पूर्व कुलपति, सिंघानिया विश्वविद्यालय, राजस्थान

भक्ति योग आत्मसंयम, अहिंसा, ईमानदारी, निश्छलता आदि गुणों की अपेक्षा रखता है। चित्त निर्मलता के बिना निःस्वार्थ प्रेम संभव ही नहीं है। भक्तियोग में साधक अपने को प्रभु के चरणों में पूर्णरूप से समर्पित कर देता है। प्रेम से भय, घृणा अथवा शोक उत्पन्न होता है। लेकिन आध्यात्मिक प्रेम में परमात्मा के चरणों में समर्पण हो जाता है। यदि प्रेम परमात्मा से हो जाये तो वह मुक्तिदाता बन जाता है। ज्यों–ज्यों ईश्वर से लगाव बढ़ता है त्यों–त्यों नश्वर सांसारिक वस्तुओं से लगाव कम होने लगता है। भक्तियोग में स्वार्थ पूरी तरह छूट जाता है। पराभक्ति ही भक्तियोग है। पराभक्ति में मुक्ति को छोड़कर अन्य कोई अभिलाषा नहीं होती। भक्ति का अर्थ है– आत्मसमर्पण। जब भक्त अपने को भगवान के चरणों में समर्पित कर देता है तो उसकी भक्ति प्रारंभ हो जाती है। जब भक्त यह कह देता हैं कि मेरा जो कुछ भी है, वह सब आपके चरणों में समर्पित है तो वह भक्ति योग हो जाता है।

गीता में कर्मयोग, ज्ञानयोग और भक्तियोग तीन मार्ग ईश्वर की प्राप्ति के लिए बतलाये गये हैं। कर्मयोग में कर्म के द्वारा ईश्वर की प्राप्ति बतलायी गयी है। कर्म का अर्थ है पुरुषार्थ। गीता में कहा गया है कि बिना कर्म किये मनुष्य एक क्षण भी नहीं रह सकता। मानव प्रतिक्षण कुछ न कुछ करता ही रहता है। गीता में कहा गया है कि कर्म को कर्त्तव्य मानकर करना चाहिए, फल की आशा नहीं करनी चाहिए। जो व्यक्ति फल को दृष्टि में रखकर कार्य करता है, यदि उसे फल की प्राप्ति नहीं होती तो दुःख होता है। इसीलिए निष्काम भावना से कर्म करने की प्रेरणा गीता में दी गयी है।

ज्ञानयोग भी ईश्वर प्राप्ति का महत्त्वपूर्ण मार्ग है। कहा भी गया हैं बिना ज्ञान के मुक्ति नहीं मिल सकती। ज्ञान वस्तु के यथार्थ स्वरूप के निर्धारण में सहायक होता है। ज्ञान से ही शुद्ध और अशुद्ध का पता चलता है। जिस प्रकार से अंधकार को दूर करने के लिए प्रकाश की

आवश्यकता होती है, उसी प्रकार अज्ञान को दूर करने के लिए ज्ञान की आवश्यकता होती है। मानव के हृदय में जो अंधकार बैठा हुआ है वह बहुत ही गहन है। साधारण ज्ञान या प्रकाश से उसे नहीं दूर किया जा सकता है। संतों के उपदेश, गुरु का ज्ञान और सद्ग्रन्थों के अध्ययन से हृदय में स्थित अंधकार दूर होता है। इसलिए ज्ञान अज्ञान को दूर करने के लिए बहुत आवश्यक है। ईश्वर की प्राप्ति में सबसे अधिक सहायक भक्ति मार्ग है। यह मार्ग बिना अहंकार को छोड़े नहीं आता। जिस मनुष्य में अहंकार रहता है, वह भक्ति मार्ग पर चल ही नहीं सकता।

मानव कितना भी ज्ञानी हो जाये, किन्तु यदि उसका अहंकार दूर नहीं हुआ तो उसका ज्ञान व्यर्थ है। रावण बहुत बड़ा ज्ञानी था, किन्तु उसके अहंकार ने ज्ञान के ऊपर ऐसा आवरण डाल दिया कि उसका ज्ञान अंधकार से भी अधिक खतरनाक हो गया। यही अहंकार उसके विनाश का कारण सिद्ध हुआ। भक्ति मार्ग पूर्ण रूप से समर्पण का मार्ग है। इसमें अहंकार का पूर्ण विनाश हो जाता है। साधक अहंकार का त्याग करके अपनी अंतःप्रेरणा से भगवान को ही सबकुछ मान बैठता है। ऐसी स्थिति पूर्ण निरहंकारता की स्थिति है। भक्ति निराशा या भय के कारण नहीं होती। भक्ति सदैव रचनात्मकता को आधार मानकर चलती है। भक्ति मार्ग एक प्रतिरोधात्मक शक्ति प्रदान करता है। जब कोई सहारा नहीं होता तो मानव ईश्वर की शरण में जाता है। कबीरदासजी ने लिखा हैं–

दुःख में सुमिरन सब करे, सुख में करे न कोय।

जो सुख में सुमिरन करे, दुःख काहे को होय।।

कबीर, सूर, तुलसी, जायसी और मीरा जैसे भक्त कवियों ने अपने आराध्य देव की स्तुति करके भक्ति की रचनात्मकता का परिचय दिया था। भक्ति का अर्थ है– विनम्रता, अच्छाई, निरहंकारता। प्रभुता का अर्थ है– अहंकार। जिस व्यक्ति में लघुता होती है, जिस व्यक्ति में विनम्रता होती है, जिस व्यक्ति में निरहंकारता होती है, उस व्यक्ति का सामाजिक विकास सांस्कृतिक विकास बहुत अधिक होता है। ऐसा व्यक्ति सहनशील और दूसरों को सम्मान देने वाला होता है। किन्तु जिस व्यक्ति में अहंकार होता है उसका धीरे–धीरे पतन हो जाता है।

वेदों, उपनिषदों, रामायण, महाभारत, गीता और आगमों में यही बताया गया है कि मानव को विनयशील होना चाहिए। भक्ति एक ऐसा तत्व है जिसके रहने पर बुद्धि आस्तिक्य भाव से युक्त हो जाती है। सर्वत्र आत्मवत् भाव दिखलाई देने लगता है। स्व और पर का भेद मिट जाता है। क्रोध, मान, माया और लोभ का सर्वथा विनाश हो जाता है। इन चारों तत्वों में से यदि एक का भी प्रवेश अंदर हो जाये तो, अन्य तत्व अपने आप प्रवेश कर जाते है और बुद्धि को नकारात्मकता की ओर ले जाते हैं। भक्ति का भाव मानव को अपने अन्दर धारण करना चाहिए। भक्ति स्वयं प्रभुता को प्रदान करा देती है। भक्ति की शक्ति से मानव के अन्दर नकारात्मक विचारों का विनाश हो जाता है। सकारात्मक विचारों के उदय से स्व और पर का भेद समाप्त हो जाता है।